UNIT-3

जीवनियाँ

पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर

बाल्यकाल – ग्वालियर घराने के मुख्य प्रतिनिधि स्वर्गीय पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जन्म सन् 1872 के 18 अगस्त श्रावण पूर्णिमा को कुरून्दवाड़ रियासत के बेलगांव नामक स्थान में हुआ था। पिता एक अच्छे कीर्तनकार थे और यह उनका वंश–परंपरागत व्यवसाय था। उन्होने पं० जी को अंग्रेजी शिक्षा दिलानी शुरू की, किन्तु अभाग्यवश दीपावली के दिन आतिशबाजी से खेलते समय उनकी आंखों की ज्योति कम हो गई। परिणाम–स्वरूप अध्ययन बन्द कर देना पड़ा। आंखो के बिना कोई उचित धंधा न मिलने के कारण विवश होकर संगीत की शरण लेनी पड़ी। उन्हें मिरज के पं. बाल कृष्ण बुआ इचलकरंजीकर के पास संगीत–शिक्षा ग्रहण करने के लिये भेज दिया गया। मिरज रियासत के तत्कालीन महाराजा ने उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर, उन्हें राजाश्रय दे दिया और उनके लिए प्रत्येक प्रकार की व्यवस्था कर दी।

एक बार मिरज में एक सार्वजनिक सभा आयोजित की गई और रियासत के सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों को विशेष रूप से निमन्त्रित किया गया। पं० विष्णु दिगम्बर जी भी निमंत्रित व्यक्तियों में से एक थे, किन्तु उनके गुरू जी को निमंत्रित नहीं किया गया। पं० जी ने इसका कारण जानना चाहा। पूछने पर उन्हें आश्चर्यजनक उत्तर मिला कि अरे! वे तो गवैये हैं, उन्हें क्या आमंत्रित किया जाए? अपने पूज्य गुरू और गवैयों के विषय में कहे गये ये वाक्य उनके हृदय में घुस गये। वे सोचने लगे कि समाज में संगीतज्ञों की इतनी दयनीय दशा हो चुकी है। अतः पंडित जी ने संगीतज्ञों की दशा सुधारने, समाज में संगीत को उच्च स्थान दिलाने तथा संगीत का प्रचार–प्रसार करने का दृढ़ संकल्प किया।

भ्रमण – सन् 1896 में राजाश्रय के सभी सुखों को छोड़कर अपने उददे्श्यों की पुर्ति के लिये पंडित जी देशाटन के लिये निकल पड़े। सर्वप्रथम वे सतारा गये, जहाँ उनका भव्य स्वागत हुआ और उनका संगीत कार्यक्रम बहुत सफल रहा। इस प्रकार वहाँ के लोगों में संगीत और संगीतज्ञों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हुई। इसके बाद उन्होनें भारत के अनेक स्थानों का भ्रमण किया और जहाँ भी गये गायन का प्रदर्शन दिया।

कार्य – संगीत का प्रचार और प्रसार करने के लिये विष्णु दिगंबर जी ने यह अनुभव किया कि सर्वप्रथम गीत के श्रृंगार रस के भदद् शब्दों को निकाल कर भक्ति रस के सुन्दर शब्दों को रखा जाए और संगीत के कुछ विद्यालय स्थापित किये जाए, जहाँ संगीत की शिक्षा दी जा सके। अतः उन्होंने बहुत से गीत के शब्दों में परिवर्तन किया और 5 मई सन् 1901 को समय भारतवर्ष का बंटवारा नहीं था और लाहौर जो अब पाकिस्तान में है, भारत में ही था। संस्था को ठीक प्रकार से चलाने के लिये उन्हें बीच–बीच में आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ता। आरम्भ में कई दिनों तक विद्यालय में कोई व्यक्ति प्रवेश के लिये नहीं गया, किन्तु पंडित जी निराश नहीं हुये। स्कूल के समय वे स्वंय तानपुरा लेकर अभ्यास करते। कुछ दिनों के बाद विद्यार्थियों की संख्या धीरे–धीरे बढ़ती गई। इसी बीच उन्हें अपने पिता की मृत्यु का दुखद समाचार प्राप्त हुआ, किन्तु वे विद्यालय के कार्यो में इतने व्यस्त रहे कि ऐसे समय पर भी घर नहीं जा सके। सन् 1908 में पंडित जी ने बम्बई में गांधर्व महाविद्यालय की एक शाखा खोली। वहाँ पर उन्हें लाहौर की तुलना में अधिक सफलता मिली तथा विद्यार्थियों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। लगभग 15 वषों तक विद्यालय का कार्य सुचारू रूप से चलता रहा। विद्यालय का भवन बनवाने में विद्यालय को काफी कर्ज लेना पड़ा। कुछ समय तक वह ऋण अदा नहीं किया जा सका। फलस्वरूप भवन ऋण में चला गया और विद्यालय बन्द हो गया। तब से पं० जी का ध्यान

रामनाम की ओर आकर्षित हुआ। वे गेरूआ वस्त्र पहनने लगे और हर समय 'रघुपति राघव राजाराम–' के गायन में मस्त रहते। इसके बाद उन्होंने नासिक, महाराष्ट्र में 'रामनाम आश्रम' की स्थापना की।

वैदिक काल में प्रचलित आश्रम प्रणाली के आधार पक पलुस्कर जी ने लगभग सौ शिष्यों का तैयार किया। उनके अधिकांश शिष्य उनके साथ रहते। उनके खाने–पीने, रहने तथा शिक्षा का प्रबन्ध वे स्वंय निःशुल्क करते। उनके शिष्यों में स्व० वी० ए० कशालकर, स्व० ओमकार नाथ ठाकुर, बी०आर० देवधर, वी०एन० ठाकर आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उन्होंने एक नई स्वरलिपि पद्वति की रचना की जो उनके नाम से सम्बद्ध है। उन्होंने लगभग पच्चास पुस्तकें लिखीं, जिनके नाम हैं – संगीत बाल प्रकाश, बाल बोध, राग प्रवेश बीस भागों में, संगीत शिक्षक, महिला संगीत आदि। 'संगीतमृत प्रवाह' नामक पत्रिका भी कुछ समय तक निकालते रहे। सन् 1930 में उन्हें लकवा मार गया, फिर भी अपनी कार्य–क्षमता के अनुकूल संगीत–सेवा करते रहे। अन्त में 21 अगस्त 1930 को उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। उनके बारह पुत्र हुये जिनमें से ग्यारह पुत्र की मृत्यु बाल्यावस्था में ही हो गई। पंडित जी के केवल एक पुत्र दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर अपने जीवन के 35 वर्षो तक संगीत की सेवा करते रहे, किन्तु ईश्वर की विडम्वना कौन जाने। सन् 1955 की विजयादशमी को उनका भी देहावसान हो गया। सौभग्य से उनके पुत्र पं० दत्तात्रेय के कुछ रिकार्ड बन चुके हैं, जो आकाशवाणी के विभिन्न कैन्द्रों से प्रसारित होते रहते हैं।

शार्ड़गदेव

उत्तर भारतीय संगीत का प्रत्येक विद्यार्थी शार्ड़गदेव से कहीं अधिक उसके ग्रन्थ 'संगीत रत्नाकर' से परिचित है इसका कारण यह है कि यह ग्रन्थ भारतीय संगीत की आधार–शिला है। शास्त्र में पग–पग पर इसी ग्रन्थ का सन्दर्भ आता है। इस ग्रन्थ की रचना आज से लगभग 7 सौ वर्ष पूर्व (तेरहवीं शताब्दी में) हुई थी। उस समय सम्पूर्ण भारत में संगीत की एक पद्धति थी और संगीत में उत्तर भारतीय संगीत और दक्षिण भारतीय संगीत इस प्रकार का कोई विभाजन न था। इसलिये इसे दोंनो संगीत–पद्धतियों में आधार ग्रन्ध माना गया है। हम सभी जानते हैं कि यह ग्रन्थ संस्कृत की सूत्र–शैली में लिखा गया है। अतः आज का प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इसको ठीक से समझ नहीं सकता।

शार्ड़गदेव का वास्तविक जन्म समय निश्चिन रूप से नहीं बताया जा सकता, किन्तु इतना निश्चित रूप से अवश्य कहा जा सकता है कि उनका जन्म तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में सन् 1210 के बाद बताया है। उनके पूर्वज कश्मीर के निवासी थे, जो कुछ कारणवश दक्षिणी भारत चले गये थे। शार्ड़ग्देव के पिता पं० शोडल देवगिरि के तत्कालीन राजा के यहाँ कार्य करते थे। शार्ड़ग्देव की प्राकृतिक प्रतिभा बाल्यपन से ही झलकती थी, अतः उन्हें सरलता से राजाश्रय और समुचित शिक्षा–दीक्षा मिली। शुरू से ही संगीत व साहित्य में उनका झुकाव था।

तेरहवीं शताब्दी के उत्तराद्ध में पं० शारंगदेव 'संगीत रत्नाकर ग्रन्थ की रचना की। इसमें पूर्ववर्ती लगभग सभी ग्रन्थों का सार मौलिक ढंग से सेकलित किया गया है। इसलिये किसी भी पारिभाषिक शब्द की व्याख्या करते समय अगर किसी प्राचीन पुस्तक के सन्दर्भ देने की आवश्यकता होती है, तो 'संगीत रत्नाकर' के श्लोकों का उल्लेख किया जाता है। कई विद्वानों ने इसकी टीका भी लिखी है। यह पुस्तक मुख्य 7 अध्यायों में विभाजित है, जैसे स्वराध्याय, राग विवेकाध्याय, प्रकीर्णकाध्याय, प्रबंधाध्याय, तालाध्याय, वाधाध्याय और नृत्याध्याय।

इसमें समस्त गेय रचनाओं को, जिन्हें उस समय जाति कहते थे, दस वर्गों में विभाजित किया गया है– भाषा, विभाषा, अन्तर्भाषा, ग्राम राग, राग, उपराग, रागंग, भाषांग उपांग और कियांग जो

'रत्नाकार के दस विधि राग वर्गीकरण' के नाम से प्रसि; है। इसके साथ–साथ इसमें स्त्री, पुरूष और नपुंसक राग–विभाजन भी माना गया है।

आधुनिक काल के समान इसमें एक सप्तक के अन्तर्गत 22 श्रृतियाँ और 12 स्वर – 7 शुद्ध और 5 विकृत माने गये हैं। क्रमशः 4, 3, 2, 4, 4, 3 और 2 श्रृतियाँ शुद्ध स्वरों की मानी गई हैं। दोनों में मुख्य अन्तर यह है कि प्राचीन काल में प्रत्येक स्वर अपनी अन्तिम श्रुति पर स्थापित किया गया था और आधुनिक काल में प्रथम श्रुति पर माना जाता है, अतः उस समय शुद्ध थाट काफी माना जाता था और आजकल बिलावल, इसलिये 'रत्नाकार' में वर्णित राग हमारे प्रयोग में नहीं आ सके। दूसरे 'संगीत रत्नाकर' काल के रागों और आधुनिक रागों के स्वरूप में अंतर है।

इनके अतिरिक्त 'संगीत रत्नाकार' की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें गन्धार ग्राम का, जो उस समय तक प्रायः लुप्त हो चुका था, विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास

भारतीय संगीत की उत्पत्ति में धार्मिक मत ही प्राप्त होते हैं। यह कहा जाता है कि ब्रह्मदेव संगीत कला के जनक हैं। उन्होंने यह विद्या शिवजी को प्रदान की तथा शिवजी ने यह कला मां सरस्वती ने प्रदान की। उसके बाद यह कला नारद जी द्वारा, गर्न्धव, किन्नर और अप्सराओं तक पहुची। प्राचीन काल के देवताओं का संगीत मार्गी संगीत कहलाता था। क्योंकि यह ब्रह्मा द्वारा मार्गित था। इस संगीत का प्रयोग देवतागण मोक्ष प्राप्ति के उद्देश्य से करते थे। कुछ विद्वानों के मतानुसार संगीत की उत्पत्ति ''ओउम'' शब्द से हुई। धार्मिक मत चाहे कुछ भी हो। लेकिन इतिहासिक दृष्टि से भारतीय संगीत के इतिहास को तीन भागों में विभक्त किया गया है।

1. प्राचीन काल 2. मध्य काल 3. आधुनिक काल

प्राचीन काल – प्राचीन काल में अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे गए। बाल्मीकि ऋषि ने ईसा ने लगभग 500 ई० पूर्व रामायण का लेखन किया। अनेक विद्वानों का कथन है ि कइस काल में संगीतज्ञों का संगीत वैदिक काल के संगीत की भांति ही था। रावण भी संगीत का अत्यंत प्रेमी था। वह समय–समय पर संगीत आयोजन करता था तथा उन अवसरों पर स्वंय भी उपस्थित रहता था। उसका स्वर ज्ञान भी अपूर्व था। महाभारत ग्रन्थ वेदव्यास जी ने लिखा। इसमें लगभग एक लाख श्लोक संगीतमय है। इस युग में श्री कृष्ण जी संगीत के महान विद्वान हुए। उनकी वंशी में विचित्र जादू था जोकि सभी को अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। इसी काल में संगीत का सबसे पहला ग्रंथ नाट्यशास्त्र लिखा गया। इसके अन्तर्गत संगीत संबंधी छः अध्याय जोड़कर संगीत की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया हैं। उस समय संगीत का प्रयोग नाट्यशास्त्र के अंतर्गत किया जाता था।

नाट्य शास्त्र अत्यंत उपयोगी तथा महत्वपूर्ण माना जाता है। उनका संगीत संबंधी विवरण आज भी अत्यंत उपयोगी है। प्राचीन काल के गुप्त काल को संगीत का स्वर्ण युग कहा जाता है। क्योंकि गुप्त काल में संगीत की अभूतपूर्व तथा आश्चर्यजनक उन्नति हुई। इस युग में ऐसे ऐसे गायक व वादक कलाकार थे जिनको कला में अपूर्व क्षमता विद्यमान थी। वे अपने संगीत के माध्यम से पानी बरसा देते, पानी में आग लगा देते तथा ऐसे अनेक चमत्कार कर देते थे जोकि विचित्रता से भरपूर होते थे।

संगीतज्ञों के नैतिक चरित्र उज्जवल थे अर्थात् वे किसी तरह के दुर्व्यसन से मुक्त थे। कहा जाता है कि सितार की उत्पत्ति गुप्त काल में हुई। और सर्वप्रथम गायन भी इसी काल में आरंभ हुआ। गुप्त काल के राजा भी संगीत प्रेमी थे और संगीतज्ञों के प्रोत्साहन व राजाश्रय देते थे। इस काल में लोक संगीत का भी भरपूर विकास हुआ। इसीलिए इस काल को संगीत का स्वर्ण युग माना जाता है। इस काल में संगीत की तीनों कलांए गायन वादन तथा नृत्य ने उन्नति की चरम सीमा को छू लिया था।

समुंद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, हर्षवर्धन व राजपूत राजा इसी काल में हुए इनके समय में संगीत की अभूतपूर्व उन्नित हुई। इस काल में सांगीतिक ग्रंथ जैसे पाणिनी का पाणिनी शिक्षा, दत्तिलकृत दत्तिलम, मंतगकृत ब्रहद्देशी व नारदकृत नारदीय शिक्षा लिखे गए जिनमें संगीत का महत्वपूर्ण विवरण प्राप्त होता है। अतः प्राचीन काल में संगीत की बहुत उन्नति हुई।

मध्य काल – मध्यकाल में संगीत के स्वरूप में कुछ बदलाव आया क्योंकि इस काल में मुस्सलमानों का भारत में आतमन हुआ। मुस्लमान शासक संगीत प्रेमी तो थे परन्तु वे भारतीय सभ्यता का विकास सहन

नहीं कर सकते थे। वे अपने साथ अनेक संगीतज्ञ भी लाए। वैसे तो उनके काल में अनेक नए वाद्य, राग आदि बने और संगीत के महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना हुई परन्तु अब उन पर किसी भारतीय की नहीं मुसलमानों की छाप थी। दक्षिणी भारत मुसलमानों के आगमन के प्रभावित नहीं हुआ। अतः यहां पर विशुद्ध संगीत पनपता रहा। मध्यकाल में अनेक मुसलामान शासक अलाऊद्दीन खिलजी, राजा मान सिंह तोमर, बाबर, हुमायुँ, शेरशाह सूरी, महान सम्राट अकबर, जहांगीर, शांहजहां इत्यादि सभी राजाओं के राज्यकाल में संगीत को व अनेक महत्वपूर्ण संगीतज्ञों को राजाश्रय प्राप्त होता रहा व संगीत उन्नित की ओर अग्रसर होता रहा।

इस काल में संगीत के अनेक ग्रंथों की रचना हुई जैसे जयदेवकृत गीनगोबिन्द, पंडित शारंगदेव कृत, संगीत रत्नाकर, कविलोवनकृत राग तरंगिणी रामामात्यकृत स्वरमेल कलानिधि, पं. अहोबल रचित संगीत पारिजात, सोमनाथ कृत राग विवोध, पंडित दामोदर द्वारा रचित संगीत दर्पण, पंडित व्यंक्टमुखी कृत चर्तुदंडि प्रकाशिका, पंडित भावथट्ट कृत अनूप विलास, अनूप संगीत रत्नाकर, अनूपांकुश, पंडित श्रीनिवास कृत राग तत्वविबोध व संगीत सारामृत आदि।

तानसेन इस काल के महान संगीतकार हुए व इसी काल में भक्ति आन्दोलन भी चरम सीमा पर पहुंच गया था। अनेक रागों व अनेक तालों की रचना भी इस काल में हुई। लेकिन सत्रहवीं शताब्दी में औरंगजेब दिल्ली की राजगद्दी पर बैठा वह संगीत से बहुत नफरत करता था। उसने अपने राज्य में ऐलान किया कि संगीत के वाद्यों को जमीन में इतना गहरा दफना दो कि इनसे संगीत की ध्वनि कतई सुनाई न दें। उसने संगीतकारों को दण्ड दिया व कारावास में डाल दिया इससे संगीत पतन की ओर जाने लगा परन्तु फिर भी संगीत के सच्चे जिज्ञासु संगीत की साधना छिपकर करते रहे व संगीत की लौ जलाए रखी।

आधुनिक काल – 18वीं शताब्दी से लेकर आज तक का समय आधुनिक काल कहलाता है। इस समय अंग्रजों का भारत में आगमन हो चुका था। वे भारतीय संगीत को अच्छा नही मानते थे। फलस्वरूप भारतीय संगीतकारों की संख्या घटने लगी।

अब संगीतज्ञ राजाओं के दरबार में रहने लगे। संगीत का आश्रय अब केवल देशी राजाओं का दरबार ही रह गया था।

इसके पश्चात इसी काल में संगीत के घरानों का जन्म हुआ। आधुनिक काल संगीत की अनेक पुस्तकें जैसे मुहम्मद रज़ा की नगमते आफसी, श्री कृष्णानन्द व्यास द्वारा रचित 'संगीत' रागकल्प द्रुम मुहम्मद रज़ा की नगमते आफसी, महाराणा प्रताम देव सिंह जी द्वारा संगीतसार, पन्नालाल गोस्वामी द्वारा रचित नाद विनोद, कृष्णाधन बनर्जी द्वारा रचित 'गीत सूत्रधार' आदि लिखी गई।

आधुनिक समय में दो महान संगीतकार पंडित विष्णु दिगम्बर पुलुस्कर तथा पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे हुए इन दोनों संगीतकारों ने संगीत में विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जन्म कुरून्दवाड़ा रियासत के बेल गांव में सन् 1872 ई० में श्रावणी पूर्णिमा के दिन हुआ। इन्होनें सर्वप्रथम 5 मई 1905 में लाहौर में संगीत के प्रचार के लिए गान्धर्व महाविद्यालय की स्थापना की। पंडित जी ने एक स्वरलिपि पद्धति बनाई जो कि विष्णु पद्धति के नाम से प्रसिद्ध है। यह पद्धति कुछ सुक्ष्म हैं पर कठिन है आपने लगभग संगीत संबंधी 50 पुस्तके लिखी जो अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इनके लगभग 100 शिष्य थे जिनके से कुछ तो भारतीय संगीत के उच्च कलाकार माने जाते है जैसे पंडित ओमकार नाथ ठाकुर, विनायक राव पटवर्धन, नारायण राव व्यास, बी. आर. देवधर, एस. एस. बोडस, बी.ए. कशालकर, बी.ए. ठकार इत्यदि।

पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे जी का जन्म बम्बई के बालकेश्वर नामक स्थान पर 10 अगस्त 1860 ई० में श्री कृष्ण जन्माष्टमी में दिन हुआ। संगीत संबंधी संस्कार आपमें भरपूर मात्रा में व्याप्त थे। आपने सर्वप्रथम संगीत शास्त्र व संगीत कला का मेल किया। इन्होंने अनेक प्रचलित व अप्रचलित रागों की खोज करने उन्हें थाट राग पद्धति में बैठाया। पंडित जी ने 10 थाटों का आविष्कार भी किया। और समस्त हिन्दुस्तानी राग इन्हीं थाटों के अन्तर्गत रखें। इस तरह थाट राग पद्धति का आविष्कार किया। इन्होंने संगीत की एक महत्वपूर्ण पुस्तक का लेखन किया जिसे ''क्रमिक पुस्तक मालिका'' कहते हैं यह छः भागों में विभक्त है। इस कार्य से संगीत संबंधी सभी पुरानी चीजें अमर हो गई। पंडित जी ने एक नई स्वरलिपि पद्धति का आविष्कार किया। यह स्वरलिपि पद्धति वैज्ञानिक होने के साथ–साथ सरल भी है। अपने महत्वपूर्ण कार्यों के कारण ये संगीत जगत में सदैव अमर रहेंगें।

आज के युग में संगीत के प्रचार व प्रसार के लिए अनेक माध्यम हैं। आज आकाशवाणी तथा चलचित्र संगीत के विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। आकाशवाणी प्रतिवर्ष एक वृहद संगीत सम्मेलन और संगीत प्रतियोगिता का आयोजन करती है। चलचित्र के माव्यम से भी संगीत का विकास उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। 4 मई 1931 में प्रथम बोलती फिल्मी ''आलतआरा'' बनी थी। इस फिल्मी में गज़ल कव्वाली के ढंग के सोलह गाने गीत पर्दे पर स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे। लोगों ने उनकी कहानियों की अपेक्षा उनमें आए गीतों की अधिक सराहना की। चलचित्र के कुछ मनमोहक गीत तो आज भी बड़े प्रेम से गाए जाते हैं। आज भारत में अनेक शिक्षण संस्थाएं हो चुकी थी। ये संस्थाएं विजयवाड़ा, इन्दौर, मेहर, सिकंदराबाद (आंध्रप्रदेश) आदि में हैं। सन् 1962 में पंडित रविशंकर जी ने बम्बई में 'किन्नर स्कूल आफ म्यूजिक' और वाराणसी में 'रिम्पा' की स्थापना करके संगीत की उच्च शिक्षा की स्थापना की। यह सन् 1953 में स्थापना की गई थी। इसके माध्यम से संगीत शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को अनेक सुविधाएं प्रदान की गई हैं। यह उच्च शिक्षा प्राप्त करने पर विद्यार्थियों को स्कालरशिप भी प्रदान करती है प्रति वर्ष संगीत के चार प्रोढ़ संगीतज्ञों को 1000 रूपया व कश्मीरी शाल देकर सम्मानित किया जाता है। आज उत्तर भारत में अनेक शिक्षा संस्थाएं स्थापित है जो संगीत की शिक्षा दे रही है जैसेः– प्रयाग संगीत समिति–इलाहाबाद, मेरिस म्यूजिक कॉलेज लखनऊ, संगीत समाज कानपुर, गांधर्व महाविद्यालय–पूना, स्कूल आफ इण्डियन म्यूजिक–बड़ौदा, म्यूजिक कॉलेज–कलकत्ता, लूकरगंज संगीत विद्यालय–इलाहाबाद, शंकर संगीत विद्यालय–इन सभी शिक्षण संस्थानों के अतिरिक्त संगीत आज लगभग सभी स्कूलों, कॉलेजों में एक विषय के रूप में रख दिया गया है जिसके परिणाम स्वरूप आज घर–घर संगीत का प्रचार किसी न किसी रूप में हो रहा है।

गायन के घराने

स्वर और लय के माध्यम से भावों का प्रदर्शन संगीत कहलाता है। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति के गायन–वादन पर उसका स्वभाव, उसकी शिक्षा, उसका वातावरण आदि का प्रभाव पड़ता ही है। इसी प्रभाव के कारण मनुष्य की गायन अथवा वादन–शैली का निर्माण होता है। गायन–शैली महीने, दो महीने अथवा साल दो साल में बनने की वस्तु नहीं, बल्कि जैसे–जैसे गायक प्रौढ़ होता जाता है, उसकी शैली बनती जाती है। बाद में उस शैली को उसके शिष्यगण अपनाते हैं। आगे वे अपने शिष्यों को सिखाते हैं और इस प्रकार से एक श्रृंखला बन जाती है। इसी श्रृंखला को संगीत में 'घराना' कहते हैं। गायन के अनेक घराने हैं, किन्तु मुख्य 7 हैं। इनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है–

(1) **ग्वालियर घराना** – इस घराने का प्रारंभ नत्थन पीरवख्श से होता है। उनके दो पुत्र थे – कादरबख्श और पीरबख्श। हस्सू, हददु और नत्थूखां ये तीनों भाई कादरबख्श के पुत्र थे। ये तीनों भाई ख्याल–गायन में बड़े प्रवीण थे। हस्सू खां की शिष्य परम्परा में गुले इमाम, मेंहदी हुसेन, बालकृष्ण बुआ, बाबा दीक्षित, बासुदेव जोशी आदि थे। स्व० पं० विष्णु दिगम्बर पलुष्कर बालकृष्ण बुआ के शिष्य थे। विष्णु दिगम्बर के शिष्यों में स्व० वी० ए० कशालकर, स्व० ओंकारनाथ ठाकुर, स्व० विनायक राव पटवर्धन, स्व० वी० एन० ठकार आदि प्रमुख हैं। हद्दूखां के पुत्र रहमत खां और इतदाद खां अपने समय के अच्छे गायक थे। हद्दूखां के दामाद इनायत खां और उनके दामाद और शिष्य रामपुर के मुश्ताक हुसैन थे। मुश्ताक हुसैन ने अनेक व्यक्तियों से संगीत शिक्षा प्राप्त की। हद्दूखाँ के शिष्य इमदाद हुसैन और उनके पुत्र और शिष्य वाजिद हुसैन थे। नत्थूखां के प्रमुख शिष्य स्वयं उनके दत्तक पुत्र निसार हुसैन थे। जिनके मुख्य शिष्य शंकर पं० तथा रामकृष्ण बझे थे। शंकर पंडित के शिष्य स्व० राजा भैया 'पूँछ वाले' तथा कृष्ण शंकर पंडित थे। आकार में आलाप, स्वर लगाव और बढ़त पर विशेष ध्यान, जनता के स्तर का ध्यान, सपाट तानों का प्रयोग, लयकारी आदि बातें इस घराने की विशेषतायें हैं।

(2) **आगरा घराना** – इस घराने के जन्मदाता तानसेन के दामाद हाजी सुजान साहेब तथा घग्घे खुदाबख्श ने ग्वालियर के नत्थन पीरबख्श से संगीत शिक्षा प्राप्त की। अतः आगरा और ग्वालियर घराने का विशेष संबंध है। इस घराने के प्रमुख गायक स्व० फैयाज़ खां और स्व० विलायत हुसेन थे। लताफत हुसेन, शराफत हुसेन इस घराने के वर्तमान प्रतिनिधि रहे हैं। ध्रुपद अंग का ख्याल, नोम–तोम का आलाप, कौव्वाली के ढंग पर बोल–बनाव में निपुणता, जबड़े का प्रयोग, शब्दों का भावपूर्ण तोड़–मरोड़, लयकारी, छोटे ख्याल के गायन में विशेष चतुरता आदि बातें इस घराने की विशेषतायें हैं।

(3) **किराना घराना** – बीनकार बन्देअली खां, अब्दुल करीम खां तथा अब्दुल वहीद खां इस घराने के विशेष प्रतिनिधि हो चुके हैं। अब्दुल हक, अब्दुल गनी, अब्दुल मजीद तथा अब्दुल करीम खां भाई–भाई थे। अब्दुल करीम खां पहले सारंगी वादक थे। एक विशेष घटना के घटित होने के बाद उन्होंने सारंगी बजाना बन्द कर दिया और गाना गाने लगे। बाद में वे एक कुशल गायक हुये। अब्दुल करीम खां से स्व० सवाई गन्धर्व तथा स्व० सुरेश बाबू माने ने सीखा। इस घराने के आधुनिक गायक स्व० अमीर खां, गंगूबाई हंगल, हीराबाई बड़ोदेकर, सरस्वती राने, स्व० रज्जब अलीखाँ, गनेश रामकृष्ण बहरे बुआ, रोशनारा बेगम आदि रहे हैं। विलम्बित गायन, स्वरों की बढ़त, आकार में स्वर–लगाव, आलाप प्रधान गायन आदि इस घराने की विशेषतायें हैं।

(4) **जयपुर घराना** – इस घराने के जन्मदाता मुहम्मदअली 'मनरंग' माने जाते हैं। गोरखी बाई और आशिक अली खां इस घराने की अच्छी गायिका और गायक हो चुके हैं। इस घराने से दो शैलियों का निर्माण हुआ पटियाला और अल्लादिया खां की शैली। नीचे दोनों पर अलग–अलग विचार किया जा रहा है।

(5) **पटियाला घराना –** इस घराने का सम्बन्ध जयपुर घराने से जोड़ा जाता है। अलीबख्श (अलैया) तथा फत्तेअली (फत्तू) दोनों भाइयों ने पटियाला घराने को जन्म दिया। काले खां तथा बड़े मियाँ कालू खां इस इस घराने के अच्छे गायक हो चुके हैं। अभी तक स्व० बड़े गुलाम अली खां इस घराने का मुख्य प्रतिनिधित्व कर रहे थे।

(6) **अल्लादिया खां का घराना –** अल्लादिया खां ने अपने स्वयं के परिश्रम से एक नवीन शैली का निर्माण किया, इसलिये उन्हीं के नाम पर यह घराना चल पड़ा। अल्लादिया खां के शिष्य भाष्कर बुआ बखले थे। इस घराने के केसर बाई, मोघू बाई कुर्डीकर आदि बड़ी प्रसिद्ध गायिका थी। आज कल किशोरी अमोनकर, जो माघू बाई की पुत्री हैं, सफल और प्रसिद्ध गायिका हैं।

(7) **दिल्ली घराना –** मुगलों के पतन के पश्चात् पानरस खां ने इस घराने को जन्म दिया। उनके पुत्र उमराव खां अच्छे गायक थे। उन्होंने इस शैली का प्रचार और प्रसार किया। इस घराने के आधुनिक प्रतिनिधि, उस्ताद चाँद खां की मृत्यु अभी कुछ वर्षों पूर्व हुई है।